रुद्राष्टकम्

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं ॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं । चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं ॥

हे मोक्षस्वरूप, विभु, व्यापक, ब्रह्म और वेदस्वरूप, ईशान दिशा के ईश्वर तथा सबके स्वामी श्रीशिवजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निजस्वरूप में स्थित (अर्थात् मायादिरहित), (मायिक), गुणों से रहित, भेदरहित, इच्छारहित, चेतन, आकाशरूप एवं आकाश को ही वस्त्ररूप में धारण करनेवाले दिगंबर (अथवा आकाश को भी आच्छादित करनेवाले) आपको मैं भजता हूँ।

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं । गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं ॥
करालं महाकाल कालं कृपालं । गुणागार संसारपारं नतोऽहं ॥

निराकार, ओंकार (प्रणव) के मूल, तुरीय (तीनों गुणों से अतीत), वाणी, ज्ञान और इंद्रियों से परे, कैलासपति, विकराल, महाकाल के भी काल (अर्थात् महामृत्युंजय) कृपालु, गुणों के धाम, संसार से परे आप परमेश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ।

तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं । मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं ॥
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा । लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा ॥

जो हिमालय के सदृश गौरवर्ण तथा गम्भीर हैं, जिनके शरीर में करोड़ों कामदेवों की कांति एवं छटा है, जिनके सिर के जटाजूट पर सुंदर तरंगों से युक्त गंगाजी विराजमान हैं, जिनके ललाट पर द्वितीया का बालचंद्र और कंठ में सर्प सुशोभित है।

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं । अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं ॥
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं । भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं ॥

प्रचण्ड (बल-तेज-वीर्य से युक्त), सबमें श्रेष्ठ, तेजस्वी, परमेश्वर, अखण्ड, अजन्मा, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशवाले, (दैहिक, दैविक, भौतिक आदि) तीनों प्रकार के शूलों (दुःखों) को निर्मूल करनेवाले, हाथ में त्रिशूल धारण किये हुए, (भक्तों को) भाव (प्रेम) के द्वारा प्राप्त होनेवाले भवानी-पति श्रीशंकरजी को मैं भजता हूँ।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी । सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ।।
चिदानंद संदोह मोहापहारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ।।

कलाओं से परे, कल्याणस्वरूप, कल्प का अंत (प्रलय) करनेवाले, सज्जनों के सदा आनंददाता, त्रिपुर के शत्रु सच्चिदानंदघन, मोह को हरनेवाले, मन को मथ डालनेवाले कामदेव के शत्रु, हे प्रभो ! प्रसन्न होइए, प्रसन्न होइए ।

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं । भजंतीह लोके परे वा नराणां ।।
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं । प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं ।।

हे उमापति ! जब तक आपके चरणकमलों को (मनुष्य) नहीं भजते, तब तक उन्हें न तो इस लोक और परलोक में सुख-शांति मिलती है और न उनके संतापों का नाश होता है । अतः हे समस्त जीवों के अंदर (हृदय में) निवास करनेवाले प्रभो ! प्रसन्न होइए ।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां । नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं ।।
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं । प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो ।।

मैं न तो योग जानता हूँ, न जप और न पूजा ही । मैं तो सदा-सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूँ । हे प्रभो ! बुढ़ापा तथा जन्म (मरण) के दुःखसमूहों से जलते हुए मुझ दुखी की दुःख से रक्षा कीजिये । हे ईश्वर ! हे शंभो ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ ।

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ।।

भगवान रुद्र की स्तुति का यह अष्टक उन शंकरजीकी तुष्टि (प्रसन्नता) के लिए ब्राह्मणद्वारा कहा गया । जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उनपर भगवान शम्भु प्रसन्न होते हैं ।

